क्षेत्रवाद

कोई भी मनुष्य जहाँ जन्म लेता है तथा जहाँ अपना जीवन व्यतीत करता है, उस स्थान के प्रति उसका लगाव होना स्वाभाविक है। ऐसी स्थिति में उसके द्वारा अपने क्षेत्र-विशेष को आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक दृष्टि से सशक्त और उन्नत बनाना विकास प्रक्रिया का एक स्वाभाविक एवं अभिन्न अंग हो सकता है लेकिन जब यह भावना एवं लगाव अपने ही क्षेत्र विशेष तक सिमटकर अत्यंत संकीर्ण रूप धारण कर लेती है, तब क्षेत्रवाद की समस्या उत्पन्न होती है।

क्षेत्रवाद की अवधारणा:

क्षेत्रवाद एक विचारधारा है जिसका संबंध ऐसे क्षेत्र से होता है जो धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक या सांस्कृतिक कारणों से अपने पृथक अस्तित्व के लिये जाग्रत होती है या ऐसे क्षेत्र की पृथकता को बनाए रखने के लिये प्रयासरत रहती है।

- इसमें राजनीतिक, प्रशासनिक, सांस्कृतिक और भाषायी आधार पर क्षेत्रों का विभाजन इत्यादि से संबंधित मुद्दों को शामिल किया जा सकता है।
- जब क्षेत्रवाद की विचारधारा को किसी क्षेत्र विशेष के विकास से जोड़कर देखा जाता है तो यह अवधारणा नकारात्मक बन जाती है।

क्षेत्रवाद के उदय के कारण:

भारतीय परिप्रेक्ष्य में क्षेत्रवाद कोई नवीन विचारधारा नहीं है। प्राचीन समय से लेकर वर्तमान परिदृश्य तक समय-समय पर ऐसे अनेक कारण रहे हैं, जिन्हें क्षेत्रवाद के उदय के लिये महत्त्वपूर्ण माना जाता रहा है, इनमें से कुछ निम्नलिखित हैं-

भाषायी आधार पर:

- भाषायी आधार पर लोगों को एकीकृत करना या फिर किसी क्षेत्र का गठन करना क्षेत्रवाद को बढ़ावा देने वाले कारणों में से एक है।
- भाषायी विवाद स्वतंत्रता से पूर्व भी प्रमुख राजनीतिक मुद्दा बना रहा है।
- वर्ष 1920 में कॉन्ग्रेस पार्टी द्वारा भाषायी आधार पर राज्यों के गठन की मांग की गई।
- वर्ष 1927 में नेहरू रिपोर्ट में इस मांग को फिर से दोहराया गया।
- स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सबसे विवादित विषय भाषायी आधार पर राज्यों का पुनर्गठन था अत: इस विवाद को समाप्त करने के लिये वर्ष 1948 में धर आयोग का गठन किया गया तथा इसके बाद जे.वी.पी. समिति ने भी भाषायी आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की सिफारिश की।
- इसी क्रम में 1अक्तूबर,1953 को भाषायी आधार पर पहले राज्य के रूप में आंध्रप्रदेश का गठन किया गया।
- भाषायी आधार पर राज्यों की मांग को पूरा करने के लिये वर्ष 1956 में 'राज्य पुनर्गठन आयोग' की स्थापना की गई।
- इसके बाद अन्य क्षेत्रों में भी भाषायी आधार पर अलग राज्यों के गठन की मांग उठने लगी तथा आंदोलन प्रारंभ हो गए। इसके चलते वर्ष 1960 में महाराष्ट्र को दो भागों में बाँट दिया गया, वर्ष 1966 में पंजाब का विभाजन भी दो हिस्सों में कर दिया गया।
- इस प्रकार भाषायी आधार पर राज्यों के पुनर्गठन ने क्षेत्रवाद को उत्पन्न करने तथा इसे विकसित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

धर्म के आधार पर:

- धर्म को क्षेत्रवाद के प्रमुख कारणों में से एक माना जाता है।
- विभिन्न राजनीतिक पार्टियों द्वारा धर्म का राजनीतिकरण कर लोगों से क्षेत्रीय विकास के वायदे किये जाते हैं जो कि देश की क्षेत्रीय अखंडता एवं संप्रभुता के लिये हानिकारक है।
- धर्म के आधार पर क्षेत्रवाद को बढ़ावा देना लोगों के उन धार्मिक विश्वासों एवं मान्यताओं के साथ खिलवाड़ करना है जो संविधान द्वारा उन्हें मूल अधिकारों के रूप में प्रदान किये गए हैं।

आर्थिक असंतुलन के आधार पर:

- असमान आर्थिक विकास क्षेत्रीय असमानताओं को बढ़ावा देने में सहायक होता है जो क्षेत्रवाद को भी प्रोत्साहित करता है।
- देश में कई राज्यों के अंदर भी आर्थिक असंतुलन की स्थिति देखने को मिलती है, अर्थात् एक ही राज्य के दो क्षेत्रों में संसाधनों के वितरण में विषमता

एक ऐसी स्थति है जो राज्य की सीमा के अंदर ही असंतोष को जन्म देती है और इससे क्षेत्रवाद की समस्या उत्पन्न होती है।

- यह आर्थिक असंतुलन एक राज्य के भीतर ही नहीं बल्कि दो या उससे अधिक राज्यों के बीच भी है, जैसे- जहाँ गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक में विकास का स्तर ओडिशा, बिहार से कहीं अधिक है, तो वहीं पूर्वोत्तर राज्यों के मामले में यह अंतर और अधिक दिखाई देता है।
- क्षेत्रीय विकास में असंतुलन और प्राकृतिक संसाधनों के असमान वितरण के कारण विभिन्न राज्यों के बीच मतभेद उत्पन्न होते रहते हैं जिसके कारण क्षेत्रवाद को बढावा मिलता है।

राजनीति के आधार पर:

- भारत में क्षेत्रवाद को बढ़ावा देने में राजनीति को भी एक महत्त्वपूर्ण कारण के रूप में देखा जाता है।
- यदि राजनीतिक दृष्टि से देखा जाए, तो भारत में क्षेत्रवाद की समस्या को बल राजनीतिज्ञों द्वारा ही मिलता है।
- वर्ष 1968 में पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग व नक्सलवादी क्षेत्रों में विद्रोहों से चिंतित होकर केंद्र सरकार द्वारा प्रभावित क्षेत्रों में हथियार रखने पर प्रतिबंध लगा देने के निर्णय को राज्य सरकारों ने केंद्र सरकार के हस्तक्षेप के रूप में माना।
- जनता पार्टी के शासनकाल में गौहत्या प्रतिबंध के विषय पर केंद्र तथा तमिलनाडु, केरल व पश्चिम बंगाल की सरकारों के बीच उत्पन्न विवाद को उग्र क्षेत्रवाद का ही उदाहरण माना जा सकता है।

क्षेत्रीय संस्कृति एवं नृजातीय पहचान के आधार पर:

- विभिन्न जनजातियों द्वारा अपनी नृजातीय पहचान को सुरक्षित बनाए रखने का प्रयास करना भी क्षेत्रवाद को बढ़ावा देता है, जैसे- बोडोलैंड एवं झारखंड में जनजातीय आंदोलन।
- वहीं अपनी पृथक धार्मिक पहचान को बनाने के लिये पृथक खालिस्तान की मांग जैसा देशव्यापी मुद्दा भी क्षेत्रवाद की भावना को बढ़ावा देता है।

क्षेत्रवाद से उत्पन्न समस्याएँ /चुनौतियाँ

- बार-बार नए राज्यों के गठन से देश की एकरूपता एवं अखंडता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।
- अब तक गठित नए राज्यों में एक भी ऐसा नया राज्य सामने नहीं आया है, जिसके गठन के बाद विकास दर में अभूतपूर्व वृद्धि दर्ज की गई हो।
- क्षेत्रवाद के कारण केंद्र-राज्य संबंधों पर भी नकारात्मक प्रभाव देखने को मिलता है।
- क्षेत्रवाद से गठबंधन की राजनीति को प्रोत्साहन मिलता है जिससे क्षेत्रों के विकास के लिये नीति-निर्माण या फिर इन नीतियों के क्रियान्वयन में दुविधा उत्पन्न होती है।
- क्षेत्रवाद के परिणामस्वरूप अनेक क्षेत्रीय दलों का उदय हुआ है जिसके चलते प्रत्येक क्षेत्र के हित समूह अर्थात् नेता,उद्योगपति तथा राजनीतिज्ञ अपने-अपने क्षेत्रीय विकास को ही प्राथमिकता देते नज़र आते हैं।
- क्षेत्रीय स्तर पर विभिन्न राजनीतिक दलों द्वारा क्षेत्रीय विकास के वायदे कर लोगों के धार्मिक विश्वास का प्रयोग वोट बैंक के तौर पर किया जाता है जिसके चलते देश में सांप्रदायिकता एवं हिंसा का माहौल पैदा होता है।
- क्षेत्रवाद के कारण देश में अलगाववाद की भावना को बढ़ावा मिलता है, समय- समय पर हमें इसके कुछ उदाहरण भी देखने को मिले हैं जैसे-असम में अल्फा गुट का गठन, मिज़ोरम में मिज़ो नेशनल फ्रंट की गतिविधियाँ इत्यादि क्षेत्रवाद एवं अलगाववाद की भावना से ही प्रेरित हैं।

समाधान:

- शिक्षा के माध्यम से एक राष्ट्रव्यापी दृष्टिकोण का विकास कर लोगों एवं आने वाली पीढ़ियों में क्षेत्रवाद के दुष्परिणामों के प्रति जागरूकता का विकास किया जा सकता है।
- राज्यों को मिलकर एक-दूसरे के विकास में भागीदार के रूप में साथ आना होगा उदाहरण के तौर पर जिस प्रकार पंजाब, हरियाणा के थर्मल पॉवर स्टेशनों को बिजली निर्माण के लिये ज़रूरी कोयले की आपूर्ति झारखंड, ओडिशा से होती है।
- राज्यों की समस्या एवं ज़रूरतों को समझने के लिये नीति आयोग को और बेहतर तरीके से कार्य करने की आवश्यकता है।
- अनुच्छेद-263 में वर्णित अंतर्राज्यीय परिषद जिनका गठन राज्यों के मध्य उत्पन्न विवादों के समाधान हेतु एक परामर्शकारी संस्था के तौर पर किया गया है, द्वारा दिये गए सुझावों पर राज्य सरकारों को ध्यान देने की आवश्यकता है।
- सभी क्षेत्रों का समान विकास किया जाना चाहिये ताकि कोई भी राज्य स्वयं को विकास प्रक्रिया में अलग-थलग महसूस न करे।
- संविधान में वर्णित क्षेत्रीय परिषदें जो कि सांविधिक निकाय हैं। इनका गठन देश के प्रत्येक हिस्से में राजनीतिक समन्वय स्थापित करने, विभाजन के बाद के प्रभावों को दूर करने एवं क्षेत्रवाद, भाषावाद को रोकने के उद्देश्य से किया गया था ताकि देश के समग्र विकास के साथ-साथ इसकी एकता एवं अखंडता को बनाए रखने हेतु ये परिषदे अपने सुझाव समय-समय पर प्रस्तुत कर सकें। इन परिषदों द्वारा दिये गए सुझावों पर त्वरित अमल करने की आवश्यकता है।
- केंद्र सरकार द्वारा प्राकृतिक एवं खनिज संसाधनों का बँटवारा राज्यों की ज़रूरतों को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिये।
- केंद्र सरकार की वे सभी योजनाएँ जो आर्थिक एवं सामाजिक रूप से पिछड़े क्षेत्रों पर केंद्रित हैं, का क्रियान्वयन एवं उनकी निगरानी सही ढंग से होनी चाहिये।

निष्कर्ष:

क्षेत्रवाद की विचारधारा को समझने के साथ-साथ हमें इस बात पर भी पुनर्विचार करने की आवश्यकता है कि हम सबसे पहले भारतीय हैं उसके बाद मराठी, गुजराती, पंजाबी इत्यादि हैं। हमें अपने व्यक्तिगत हितों को नज़रअंदाज़ करते हुए देश की संप्रभुता, एकता एवं अखंडता का सम्मान करना चाहिये।

वर्तमान परदिृश्य में हमें क्षेत्रवाद के स्वरूप को समझने की आवश्यकता है, यदि क्षेत्रवाद का स्वरूप वकिास से जुड़ा है और यह लोगों को वकिास के लयि प्रेरति करता है तो उचति है। इसके परणिाम सकारात्मक होने चाहयि न कि नकारात्मक। क्षेत्रीय वकिास के साथ-साथ हमें इस बात का भी खासा ध्यान रखना होगा कि क्षेत्रवाद राष्ट्रवाद से ऊपर नहीं होना चाहयि।

PDF Refernece URL: https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/regionalism